कृष्णसेवा के परायण न होकर निराकार ब्रह्म के ध्यान का अभ्यास करते हैं।

इस अध्याय के अनुसार परमसत्य-साक्षात्कार के नाना साधनों में भक्ति सर्वोत्तम है। यदि श्रीभगवान् के संग की कुछ भी अभिलाषा हो तो भक्तिमार्ग को अवश्य अंगीकार करना होगा।

श्रीभगवान् को सीधे भक्तियोग से भजने वाले साकारवादी भक्त कहलाते हैं। दूसरे, जो निर्विशेष ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे निराकारवादी हैं। अर्जुन की जिज्ञासा है कि इनमें कौन सी स्थिति अधिक उत्तम है। परम सत्य की अनुभूति के अनेक मार्ग हैं; किन्तु श्रीकृष्ण ने इस अध्याय में निर्णय किया है कि भक्तियोग सर्वोत्तम है। श्रीभगवान् का संग करने का यह सबसे सीधा और सुगम पथ है।

द्वितीय अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा है कि जीवात्मा प्राकृत देह से भिन्न, परम सत्य (परतत्त्व) का अंश है। सातवें अध्याय में जीव को परम पूर्ण तत्त्व का भिन्न-अंश बता कर वे निर्देश करते हैं कि वह पूर्ण तत्त्व पर अपने चित्त को एकाग्र कर ले। आठवें अध्याय में उल्लेख है कि जो कोई मृत्यु-काल में श्रीकृष्ण का स्मरण करता है, वह तत्क्षण श्रीकृष्ण के परमधाम को प्राप्त कर लेता है तथा छठे अध्याय के अन्त में श्रीभगवान् कहते हैं कि सब योगियों में वह योगी परम सिद्ध है, जो अपने अन्तरात्मा से उन का निरन्तर अनन्य चिन्तन करता है। इस प्रकार गीता में सर्वत्र श्रीकृष्ण की भक्ति को ही स्वरूप-साक्षात्कार की परम सिद्धि घोषित किया गया है। फिर भी, बहुत से मनुष्य केवल श्रीकृष्ण की निर्विशेष ब्रह्मज्योति के प्रति आकृष्ट रहते हैं, जो परम सत्य (परतत्त्व) का सर्वव्यापक, अव्यक्त और इन्द्रियों से अतीत पक्ष है। अर्जुन जानना चाहता है कि इन दोनों कोटि के योगियों में किसका ज्ञान अधिक पूर्ण है। प्रकारान्तर से, अर्जुन स्वयं अपनी स्थिति के सम्बन्ध में आश्वस्त होना चाहता है, क्योंकि उसका अनुराग श्रीकृष्ण के स्वयंरूप में है। निराकार ब्रह्म में उसकी आसक्ति नहीं है। अतएव वह जानना चाहता है कि उसकी स्थिति ठीक है अथवा नहीं। प्राकृत-जगत् में तो क्या, वैकुण्ठ-जगत् में भी निराकार का ध्यान करना बहुत कठिन है। वस्तुतः परमसत्य के निराकार तत्त्व का भलीभाँति चिन्तन नहीं किया जा सकता। अतएव अर्जुन मानो कह रहा है—"इस प्रकार समय को व्यर्थ करने से क्या लाभ?" अर्जुन को ग्यारहवें अध्याय में अनुभव हो चुका है कि श्रीकृष्ण के स्वयंरूप में अनुराग होना सर्वोत्तम है, क्योंकि इससे उसे उनके अन्य सब रूपों का एक ही समय बोध हो गया और उसके कृष्णप्रेम में भी कोई अन्तर नहीं पड़ा। श्रीकृष्ण से अर्जुन की इस महत्त्वपूर्ण जिज्ञासा के द्वारा परमसत्य (परतत्त्व) के साकार और निराकार स्वरूपों में अन्तर स्पष्ट हो जायगा।

श्रीभगवानुवाच।

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।

श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।२।।